SpS-2
वैदिक वाङ्मय में ज्योतिर्विज्ञान

डॉ. शक्तिकुमार शर्मा 'शकुन्त'
वरि-ठ शोध अधिकारी
साहित्य संस्थान (I.R.S.)
जनार्दन रायनागर राजस्थान विद्यापीठ
उदयपुर (राजस्थान) भारत

वेद शब्द की व्युत्पत्ति विद्- ज्ञाने धातु से अच् प्रत्यय लगने से होती है, जिसका अर्थ है ज्ञान। वेद ज्ञान के आदि स्रोत हैं। संसार की प्राचीनतम ज्ञान राशि लिखित रूप में यदि कहीं प्राप्त होती है तो वह वैदिक संहिताओं के रूप में प्राप्त होती है। इस बात को विश्व के सभी विद्वान् एकमत से स्वीकार करते हैं। यह बात एक अलग है कि इसकी प्राचीनता को लेकर विवाद उठते रहे हैं कि ज्ञान की यह राशि कितनी प्राचीन है। इसकी निम्नतम सीमा मेक्समूलर का यह मत है कि भगवान बुद्ध से पूर्व सम्पूर्ण वैदिक साहित्य रचा जा चुका था। उनके क्रम को उल्टे क्रम से चले तो 200 वर्ष सूत्रकाल, उससे 200 वर्ष पूर्व उपनिषदकाल, उससे 200 वर्ष पूर्व ब्राह्मणकाल, उससे 200 वर्ष पूर्व संहिता काल[1] माना जा सकता है इस पूर्व बुद्ध जन्म से 800 वर्ष पूर्व संहिता काल रहा होगा। परन्तु बुद्ध का जन्म काल भी स्वयं विवाद से परे नहीं है यह काल 1800 ई. पूर्व से लेकर 600 ई. पूर्व तक दौलायमान है[2] ऐसी स्थिति में संहिता काल भी 3000 ई. पू. से 1200 ई. पू. तक दोलायमान होता प्रतीत होता है। फिर जेकोबी इसे 4500 ई. पू.[3] तो तिलक 6000 से 4000[4] ई. पूर्व के मध्य स्थापित करते हैं। सारस्वत सभ्यता के प्रकाश में आने के बाद तो 3000 ई. पू. सूखती सरस्वती महाभारत में उल्लिखित है। इससे पूर्व रामायण की रचना एवं रामायण से पूर्व सूत्र साहित्य फिर आरण्यक-उपनिषद साहित्य, उससे पूर्व ब्राह्मण साहित्य उससे पूर्व संहिता वेदांग काल माने तो 4500 से 4000 ई. पूर्व तक वैदिक काल पहुँच जाता है।

बिना किसी लिखित प्रमाण के काल निर्णय की बात अस्वीकार करने वाले आचार्य भारतीय के तिथि क्रम की उपेक्षा क्यों कर देते हैं? भारतीय तिथि क्रम का अनुसरण करें तो यह विभिन्न विद्वानों के मत से 75000 ई. पू. तक तो वैसे ही पहुँच जाता है।[5] भारतीय काल गणना के अनुसार महाभारत का युद्ध द्वापर युग के अन्तिम कालखण्ड में हुआ, रामायण की रचना त्रेतायुग में हुई और वेदों की रचना रामायण से पूर्व तो निश्चित रूप से हो गई होगी। इस तरह यह कालखण्ड सतयुग का कालखण्ड मानें तो 38,88,000 से लेकर 21,60,000 वर्षों पूर्व इनकी रचना (दर्शन) संभावित माने जा सकते हैं। यह गणना तो तब है जब रामायण की घटना 28वें त्रेता युग की घटना मानें। लेकिन परम्परा ऐसा भी नहीं मानती वह तो इसे 24वें त्रेता की घटना मानती है। 4 महायुग के अन्तर 1,72,80,000+21,60,000 जोड़ दिये जायें तो 1,94,40,000 वर्ष पुरानी रामायण घटना हो जाती है तो वेद तो इससे पूर्व हुये और वे कब से प्रचलित हैं यह पता नहीं चल रहा है। इसीलिये वेदों का अनादि सनातन और अपौरूषेय के रूप में विख्यात कर दिया गया।

इतनी प्रचीन ज्ञान राशि की अनेक व्यासों ने सम्पादित किया उनका विशि-ट क्रम निश्चित किया इस रूप में वे वेद व्यास कहलाये। अन्तिम वेदव्यास कृ:णद्वैयापन व्यास थे जिनके द्वारा महाभारत की रचना हुई। ऐसी स्थिति में वर्तमान में सम्पादित वेद सम्पदा की अन्तिम परिणति 3000 ई. पू. तो मानी ही जा सकती है। इस वैदिक संहिता साहित्य में विभिन्न प्राकृतिक तत्त्वों एवं देवों की स्तुति तो है ही प्रसंगवश आये उल्लेखों के परिशीलन से ज्ञात होता है कि वेदों में समाजविज्ञान, भूगर्भ- -विज्ञान, जलविज्ञान, नौकाविज्ञान, गणित, आयुर्विज्ञान, भूविज्ञान, अन्तरिक्षविज्ञान, व्याकरण, भाषा-विज्ञान,

---

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गेरोला पृ. 43
2. कश्मीर का सांस्कृतिक इतिहास, पृ.96
3. आई.ए.23|156 Z.D M.G|223
4. ओरायन अध्याय 4
5. संस्कृत वाड्मय - कोश श्रीधर भास्कर वर्णेकर भाग 1, भूमिका पृ. 9

सृ-टिविज्ञान, व्युत्पत्तिशास्त्र, ज्यामिति, शिल्पशास्त्र के सिद्धान्त आदि विज्ञान की नानाविध धाराओं के संकेत प्राप्त होते हैं।

ज्योतिषशास्त्र में भारतीय मनीषा का पूर्ण विश्वास ही नहीं अपितु दृढ़ आस्था और श्रद्धा का भाव है। प्रत्येक शुभ कार्य में ज्योतिषी की सलाह लेना भारतीयों का स्वभाव है। इसीलिये पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्री ने ज्योतिष और पौरोहित्य के अध्ययन को विश्वविद्यालयों में वैकल्पिक विषय के रूप में जोडना चाहा तो भारत व भारतीयता द्रोही कतिपय दलो ने विरोध का ऐसा प्रपन्च रचा मानो भारत में रहकर भारतीय संस्कृति की बात करना कोई महान अपराध हो। ज्योतिष शब्द का अर्थ है ज्योति का शास्त्र या प्रकाश का शास्त्र। ज्योतिष शब्द की व्युत्पत्ति द्युति+इसुन् प्रत्यय के मेल से होती है। द्युति का अर्थ है आभा या प्रकाश इसुन प्रत्यय लगने पर उन् की इत् संज्ञा होकर उसका लोप होगा। इस प्रकार द्युति+इसु, अन्तिम स्वर का लोप द्युत्+इस् इक उ का गुण द्योतिष् रूप बनेगा। द का ज आदेश इस प्रकार ज्योतिष शब्द बना। इसमें अच्[1] प्रत्यय लगकर ज्योतिष शब्द बना जिसका अर्थ है ज्योतिः या प्रकाश का अध्ययन, ज्योतिः की उत्पत्ति स्थल ग्रह, तारे, नक्षत्र आदि, उनकी दूरिया, गति उसका पृथ्वी पर पडने वाला प्रभाव- पृथ्वी के वातावरण, मौसम, वनस्पति, प्राणी जगत् और विशेष रश्मियों के प्रभाव काल में उत्पन्न जातक के स्वभाव, गुणधर्म तथा विशि-ट अवस्था में उसके शारीरिक मानसिक प्रतिक्रियाओं और क्षमताओं के पूर्वानुमान को ज्योतिष का कार्यक्षेत्र माना जा सकता है।

ज्योतिष के इतने बडे विस्तार को देखते हुये इसके विभाग भी होना स्वाभविक है। सामान्यतः ज्योतिष को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। इन भागों को स्कन्ध नाम से कहा जाता है। (1) गणित स्कन्ध (2) संहिता स्कन्ध (3) जातक स्कन्ध (होरा)[2]

गणित स्कन्ध के अन्तर्गत सिद्धान्त, तंत्र और करण नामक तीन भेद होतें है, संहिता ग्रंथ में ग्रहचार। नक्षत्र मण्डल में ग्रहों के गमन, ग्रह युद्ध, धूमकेतु, उल्कापात, शकुन, शुभाशुभ विचार, मुहूर्त आदि का विवेचन होता है। होरा स्कन्ध के भी दो भेद हो गये जातक और ताजिक। ताजिक में प्रतिवर्ष वर्ष प्रवेश के आधार पर लग्न बनाकर उसके फल कथन की पद्धति अपनाई जाती है।[3]

वेदों में ज्योतिष शास्त्र से संबधित अनेक सूत्र आये हैं, जो तत्कालीन युग के
ज्योतिर्विज्ञान की स्थिति का संकेत करते हैं। वैदिक देवों के तीन वर्ग किये गये द्युस्थानीयदेवता,अन्तरिक्ष-
-स्थानीय देवता तथा पृथ्वीस्थानीय देवता। इस प्रकार तत्कालीन ऋषियों को इस बात का ज्ञान था।

'ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षः शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शांतिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वंम् शान्तिः।
शान्तिरेव शान्ति सा मा शान्तिरेधि'।[4]

अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले ग्रह सूर्य और चन्द्रमा से वेद का ऋषि बहुत परिचित है। सूर्य, सविता के सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त होते हैं। उसे पता है कि सूर्य और चन्द्रमा से दिन और रात का निर्माण होता है। एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के काल को सावन दिन कहा जाता है। चन्द्रमा के परिक्रमा से एक मास बनता है यह भी वैदिक ऋषि जानता है। उसे यह भी पता है कि एक माह में चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है और उससे मास बनते हैं। चन्द्रमा अमावस्या को सूर्य के साथ युति करता है और उसके बाद जैसे-जैसे दूर जाता है तिथियाँ बढती चली जाती है।

चन्द्रमा वा अमावस्यायामादित्यमनुप्रविशति

---

1. संस्कृत हिन्दी शब्दकोश वामन शिवराम आप्टे पृ.411
2. सिद्धान्त संहिता होरारुपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
   वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमनूत्तमम्।।
   नारद संहिता 1/4
3. भारतीय ज्योतिष, बालकृ:ण दीक्षित पृ. 14
4. शुक्ल यजुर्वेद , रुद्र-ाध्यायी शान्ति मंत्र पृ. 351

आदित्यात् वा चन्द्रमा जायते।[1]

अर्थात अमावस्या को चन्द्रमा सूर्य में प्रवेश करता है और बाद में (प्रतिपदा को) सूर्य से ही चन्द्रमा उत्पन्न होता है। आजकल भी यह माना जाता है अमावस्या को सूर्य चन्द्र एक राशि और अंश में होते हैं। सूर्य चन्द्र की दूरी में 12 डिग्री का अन्तर होने पर एक तिथि बनती है। जैसे-जैसे चन्द्रमा व सूर्य की दूरी बढती जाती है तिथियाँ बढती जाती है। अतः सामान्यतः अमावस्या से मास का प्रारंभ होता है

अमावस्यया मासान्सम्पाद्यहरुत्सृजन्ति।
अमावस्यया हि मासान् संपश्यति।[2]

दक्षिण-भारत में आज भी मासारंभ अमावस्या से ही होता है। उत्तर-दक्षिण के शुक्ल पक्ष के समान है कृ:णपक्ष उसी मास के शुक्ल पक्ष के बाद आता है। उत्तर भारत के समान पूर्णिमा से भी मास प्रारंभ करने की प्रथा भी वैदिक काल में थी।

पौर्णमास्या मासान्संपाद्यहरुत्सृजन्ति।
पौर्णमास्या हि मासान् संपश्यन्ति।[3]

इसी तरह यज्ञ के सम्बंध में पूर्णिमा से व्रत बर्हि व्रत का प्रारंभ और अमावस्या को वत्स व्रत करने का विधान है

बर्हिषा पूर्णमासे व्रतमुपैति वत्सैरमावस्यायाम्[4]।।

तिथि-

तिथि के संदर्भ में जो धारणा अभी प्रचलित है (सूर्य-चन्द्रमा 12^0 का अन्तर) संभवतः वेद काल में नहीं थी उस समय चन्द्रास्त चन्द्रोदय तक के काल को तिथि कहते थे

Vijnana Bharati

" यां पर्यस्तमियादभ्युयादिति सा तिथिः[5] "

चन्द्रमा अमावस्या से पूर्णिमा तक बढ़ता है, पूर्णिमा से अमावस्या तक चन्द्रमा क्रमशः घटता है। इस प्रकार से चन्द्रमा की पन्द्रह-पन्द्रह स्थितियाँ बनती है। इसी आधार पर यह कहा गया चन्द्रमा पन्द्रह (प्रकार) होता है।

चन्द्रमा वै पञ्चदशः। एष हि पञ्चदश्यामपक्षीयते पञ्चदश्यामापूर्यते[6]

ऋतु-

वेदकाल में वर्ष में 2-2 मासों की एक ऋतु होती है। इसके आधार पर भी मासो के नाम भी होते थे।
वाजसनेयी संहिता में ये नाम आयें हैं

" मधुश्चमाधवश्च वासन्तिकावृतू शुक्रश्चशुचिश्च ग्रै-मावृतू नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू.

ईषश्चोर्जश्च शारदावृतू। सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू तपश्चतपस्यश्च शैशिरावृतू" [7]

इस प्रकार तैत्तिरीय संहिता में छः ऋतुओं और उनमें आने वाले मासों के विषय में हमें पर्याप्त जानकारी उपलब्ध होती है। वाजसनेयी संहिता में भी उपर्युक्त मासो के विषय में जानकारी उपलब्ध होती है।

---1.

तैत्तिरीय संहिता 3:4:7:1
2. तैत्तिरीय संहिता 7:5:6:15
3. तैत्तिरीय संहिता 7:5:6:15
4. तैत्तिरीय संहिता 1:6:7
5. एतरेय ब्राह्मण
6. तैत्तिरीय ब्राह्मण
7. तैत्तिरीय संहिता 4:4:11

मधवे स्वाहा माथवाय स्वाहा शुक्राय स्वाहा शुचये स्वाहा। नभसे स्वाहा नभस्याय स्वाहेषाय स्वाहोर्जाय स्वाहा सहसे स्वाहा सहस्याय स्वाहा तपसे स्वाहा तपस्याय स्वाहाहंस्पतये स्वाहा।[1]

इस संहिता में सामान्यतः वर्ष के 12 मासों के अतिरिक्त तेरहवे मास जिसे अधिक मास भी कहा जाता है, के विषय में भी जानकारी प्राप्त होती है।

वेदमास धृतव्रतो द्वादश प्रजावतः। वेदा य उपाजायते[2]

तैत्तिरीय संहिता में वर्ष की वृषभ से तुलना करते हुये बतलाया गया है कि ऋतुओं का समुह यह संवत्सर वृषभ है यह तेरहवा मास है वह उस वृषभ की पूंछ है, दूसरी उपमा देते हुये कहा गया है कि यह संवत्सर अश्वमेध का अश्व है तेरहवा माह इस इश्व की पुच्छ है।

ऋषभो वा एष ऋतूनां संवत्सरः। तस्य त्रयोदशमासो वि-टपम्

ऋषभ एष यज्ञाना
यदश्वमेधः यथा वा ऋषभस्य वि-टपम्
एवमेतस्य वि-टपम्।"[3]

मधु माधव आदि के अतिरिक्त भी मासों की अन्य गणना भी प्रचलित थी इनके नाम हैं

(1) अरुण (2) अरुणरज (3) पुण्डरीक (4) विश्वजित (5) अभिजित् (6) आर्द्र (7) पिन्वमान (8) अन्नवान् (9) रसवान् (10) इरावान् (11) सर्वोषध (12) संभर
(13) महस्वान्[4]

उपर्युक्त मासों में अहंस्पति इन मासों में महस्वान् अधिक मास है जिसे मल मास भी कहते हैं। जब किसी एक मास में दो संक्रान्तियां आती है तो वह अधिक मास कहलाता है, किसी में एक भी संक्रान्ति नहीं आये तो वह क्षय मास।

मासों की गणना प्रसW में ही ऋतु का भी उल्लेख ऊपर हो चुका है। मास की इन छः ऋतुओं बसन्त, ग्री-म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर का एक चक्र एक वर्ष में पूर्ण होता है अतः
कभी-कभी किसी ऋतु के साथ संख्या लगाकर वर्ष गिनने की प्रथा भी रही है।

जीवेम शरदः शतम्, पश्येम शरदः शतम्
प्रब्रवाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतम्
भूयश्च शरदाम् शतम्[5]

इसी तरह हिमा और समा शब्द का प्रयोग भी वर्ष के अर्थ में बार-बार हुआ

जीजिविषेच्छतं समा[6]

अयन-

छः मासों और तीन ऋतुओं का एक अयन होता है। वैदिक काल के ऋषि को इस बात का भान था। वे लिखते हैं

तस्मादादित्यः षण्मासो दक्षिणेनैति षडुत्तरेण[7]

सूर्य छः मास तक दक्षिण की ओर से आवर्तन करता है और छः मास तक उत्तर की ओर से गमन करता है। इसीलिये इन्हें दक्षिणायन और उत्तरायण कहा जाता है।

उत्तरायण को देवायन तथा दक्षिणायन को पित्रायन भी कहा गया है। बसन्त, ग्री-म और वर्षा ऋतु में देवायन अथवा उत्तरायण होता था। शरद्, हेमन्त और शिशिर ऋतु में पित्रायन होता

---1.

वाजसनेयी संहिता 22:31
2. ऋग्वेद 1:25:8
3. तैत्तिरीय ब्राह्मण 3:8:3
4. तैत्तिरीय ब्राह्मण 3:10:1
5. वाजसनेयी संहिता
6. वाजसनेयी संहिता 40:2
7. तैत्तिरीय संहिता 6:5:3

था।[1] यह क्रम आजकल परिवर्तित हो गया है आजकल उत्तरायण शिशिर से ही प्रारंभ हो जाता है। वैदिक काल में यह बसन्त से ही प्रारंभ होता था।

वर्ष-

वर्ष या संवत्सर की गणना के संदर्भ में सामान्यतः वैदिक ऋषि ने वर्ष को 360 दिनों का मध्यम मान से एक संवत्सर माना है।

त्रीणि च वै शतानि ष-टिश्च संवत्सरस्याहानि
सप्त च वै शतानि विंशतिश्च संवत्सरस्याहोरात्राणि।[2]

संवत्सर के 360 दिन और 360 रात्रियों होती हैं इस प्रकार 720 दिन-रात होते हैं। यह मध्यम मान है। वैदिक ऋषि को पता था कि चन्द्रमा जब पृथ्वी की परिक्रमा $29^{1/2}$ दिनों में करता है तो उसके 12 मास मात्र 354 दिनों में पूर्ण हो जाते है। इसी तरह ऋतु चक्र से 366 ($365^{1/4}$) दिन होते हैं अतः उसने मध्यम मान 360 दिन स्वीकार किया।

सम्पूर्ण संवत्सर को एक चक्र मानते हुये ऋग्वेद के ऋषि ने संवत्सर को एक चक्र(पहिया) की उपमा दी है, जिसमें 12 प्रधियां हैं, तीन नाभियां हैं और तीन सौ साठ शंकु हैं।

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ त[[केत।
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शंकवोऽर्पिताः ष-टिर्न चलाचलासः।[3]

12 प्रधियां वर्ष के 12 माह है तीन नाभियां तीन मुख्य ऋतुएं है 360 शंकु वर्ष के 360 दिन हैं।

युग-

चान्द्र और सौर मासों की इस गणना को व्यवस्थित करने के लिये वैदिक ऋषियों ने पांच वर्षों के एक युग की परिकल्पना की है प्रत्येक संवत्सर को अलग-अलग नाम भी दिये हैं।
(1) संवत्सर (2) परिवत्सर (3) इदावत्सर (4) अनुवत्सर[4] (5) इद्वत्सर इन पांच वर्षों का एक समूह युग कहलाया। इनमें 31वां मास अधिक मास होता है। यह पांच वर्षों का समूह 60 के स्थान पर 62 मासों का होता है।
यह सब कुछ करने के पीछे उसका उद्देश्य था चान्द्र और सौर वर्षों में सामन्जस्य बिठाना।
चान्द्र वर्ष $29^{1/2}$ X 30=785 दिन
सौर वर्ष $30^{1/2}$ X 30= 915 दिन
सौर वर्ष - चान्द्र वर्ष 915-785= 30 दिन
अतः 31वां माह अधिक मास (चान्द्र दृ-टि से) हो जाता है। दूसरे अर्ध चक्र में पुनः 62 वां मास अधिक मास हो जाता है।

पर्व(पक्ष)-

वर्ष के जिस प्रकार दो भाग किये उसी प्रकार मास के भी दो किये गये जिन्हें पर्व कहा गया। जब सूर्य और चन्द्रमा एक राशि अंश पर होते हैं तो वह समय दर्श कहलाता है, जब 180^0 के अन्तर

---1.

वसन्त ग्री-मों वर्षा ते देवाः ऋतवः। शरद्धैमन्तशिशिरस्ते पितरों
स सूर्यो यत्र उदगावर्तते देवेषु तर्हिभवती।
यत्र दक्षिणावर्तते पितृषु तर्हि वर्तते
शतपथब्राह्मण 2:1:3
2. एतरेय ब्राह्मण 7:13
3. ऋग्वेद 1/164/48
4. संवत्सरो ऽसि परिवत्सरो ऽसीदावत्सरो ऽसीद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि
वाजससेनीय संहिता 26/45

पर होते हैं तो पौर्णमास कहलाता है। दर्श से प्रारंभ होने वाले मास अमान्त मास और पौर्णमासी से प्रारंभ होने वाले मास पूर्णिमान्त मास कहलाते रहे। पूर्णिमान्त मासों से चन्द्रमा की विशेष नक्षत्र पर स्थिति ज्ञात होती है। इससे पूर्णिमा को आने वाले नक्षत्र के आधार पर

Vijnana Bharati

मास के नाम की पद्धति भी विकसित हुई, यथा पूर्णिमा के दिन जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा होता है उस मास को उसी नक्षत्र के आधार पर जाना जाता है। जैसे चित्र नक्षत्र पर पूर्णिमा के दिन चन्द्रमा होने पर वह मासचैत्र मास कहलाता है। अश्विनी नक्षत्र पर चन्द्रमा होने पर वह मास आश्वयुज कहलाया। आश्वयुज फाल्गुन मास की पूर्णिमा को हवियज्ञों का विधान किया गया जिसका परिवर्तित रूप होली और दीपावली के रूप में अभी भी मनाया जाता है।

नक्षत्र-

सूर्य और चन्द्र के मार्ग को 28 (27 भी) भागों में विभक्त कर प्रत्येक भाग को नक्षत्र की संज्ञा प्रदान की गई। इस मार्ग में आने वाले तारों एक काल्पनिक रेखा से मिलाया जाये तो जो आकृति बनती उभरती है, उसे नक्षत्र का नाम दिया गया। तैत्तिरीय संहिता के काल में नक्षत्रों की गणना कृतिका से प्रारंभ होती थी। वहाँ नक्षत्र के साथ उनके अधिदेवता का भी संकेत मिलता है।

नक्षत्र	देवता	नक्षत्र	देवता
कृतिका	अग्नि	आषाढा	विश्वेदेवा
रोहिणी[1]	प्रजापति	श्रोणा	वि-णु
ति-य	वृहस्पति	धनि-ठा	वसु
आश्लेषा	सर्प	शतिभष	इन्द्र
मथा	पितर	प्रो-ठपदा	अजैकपार
फल्गुनी	भग	प्रो-ठपदा	अहिबुर्ध्न
स्वाति	वायु	रेवती	पूषा
विशाखा	इन्द्राग्नि	अश्वयुज	अश्विनौ
विचृत्र	पितर		
अपभरणी	यम		
आषाढा	आपो		

इस विवरण में मृगाशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु फाल्गुनी, हस्त, अनुराधा, ज्ये-ठा, मूल और अभिजित ये नौ नक्षत्र छूट गये हैं।

अथर्ववेद में आकर इन नक्षत्रों के साथ शुभाशुभत्व का भाव जुड गया प्रतीत होता है। अथर्ववेद के उन्नीसवें काण्ड की ये सूक्तियां यही अर्थ दे रही हैं

कृतिका और रोहिणी मुझे कल्याण प्रदान करे, मृगशिरा शम् (शान्ति) प्रदान करे, पुर्नवसु सत्यवाणी, पु-य सौन्दर्य, आश्लेषा सूर्य (संभवत तेज), मथा अयन, फाल्गुनी द्वय पूर्व, हस्त चित्रा शिव, स्वाति सुख, अनुराधा विशाखा सुखद आह्वान ज्ये-ठा और मूल अरि-ट पूर्वाषाढा अन्न उत्तराषाढा उर्जा, अभिजित पुण्य श्रवण और श्रवि-ठा पुण्य शतभिषा महान् वरीय, दोनों प्रौ-ठपरी सुशर्म, रेवती और

---

1. कृतिका नक्षत्रमग्निर्देवतारुनेरूचस्य प्रजापतेर्धातुः सौमस्यर्चे
त्वा विद्युते त्वा भासेत्वा ज्योतिषे त्वा
रोहिणी नक्षत्रं प्रजापतिर्देवता ति-यो नक्षत्रं वृहस्पतिर्देवताश्लेषानक्षत्रं
सर्पा देवताः मधानक्षत्रं पितरो देवता फल्गुनीनक्षत्रं भगो देवता
स्वातिनक्षत्रं वायुदेवता विशाखे नक्षत्रमिन्द्राग्नी देवता विचृत्रो
नक्षत्रं पितरो देवताषाढानक्षत्रमापो देवताषाढानक्षत्रं विश्वेदेवादेवता
श्रोणा नक्षत्रं वि-णुर्देवता धनि-ठा नक्षत्रं वसवो देवता शतभिषड्.
नक्षत्रमिन्द्रो देवता प्रौ-ठपदा नक्षत्रमजएकपाद देवता प्रौ-ठपदानक्षत्र
महिर्बुध्न्यो देवता रेवतीनक्षत्रं पूषा देवताऽश्वयुजौ
नक्षत्रमाश्विनौ देवतापभरणी नक्षत्रं यमो देवता
तैत्तिरीय संहिता 4:4:10

अश्विनी भग तथा भरणी धन प्रदान करे।[1]

सप्तर्षि-

सप्तर्षि का उल्लेख ऋग्वेद संहिता में मिलता है

अमी य ऋक्षा निहितास उ[kkA
uäa nn'Ós dqg fpn~ fnos;q%A[2]

ÓriÉ ब्राह्मण में भी सप्तर्षियों का पर्याप्त उल्लेख तिलता है:-

सप्तर्षिनु ह स्म वै पुरर्क्षा इत्याचक्षते[3]

इस प्रकार सप्तर्षि के विषय में वैदिक काल में जानकारी थी यह स्प-ट प्रतीत होता है ग्रह-सूर्य चन्द्रमा का उल्लेख तो स्प-टतः आया ही है शेष वृहस्पति, शुक्र आदि के उल्लेख भी प्रत्यक्ष परोक्ष रूप में देखने को मिलते हैं।

ऋग्वेद में वृहस्पति का उल्लेख है परम व्योम में ज्योतिषमान् प्रथम बार उत्पन्न होते दिखाई देता है।[4] वृहस्पति का जन्म ति-य नक्षत्र में हुआ।[5] ऋग्वेद में शुक्र को वेन नाम से पहचाना गया है ध्यातव्य है लेटिन भाषा में भी शुक्र को venus (वेनुस) ही कहा गया है।

अयं वेनश्चोदयत् पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने[6]।

शंकर बालकृ:ण दीक्षित ने लिखा है- यह सूत्र वेनदेवतात्मक है वर्णन के रूप से स्प-ट प्रतीत होता है कि यह सूक्त किसी बृहत् ज्योति अर्थात् तारा ग्रह के उद्देश्य से कहा गया है। वेद के कुछ अन्य वर्णनों से ज्ञात होता है कि यह सूक्त शुक्र विषयक है[7] बाल गंगाधर तिलक ने वेन और शुक्र का सामन्जस्य लेटिन venus, ग्रीक kupros, स्त्रीलिंग kupris, cypris से बैठाया है।[8]

वैदिक कालीन ऋषि को चन्द्र या सूर्य का वेध कर ग्रहण करने वाले आसुर (राहु) का भी पता था। सर्वप्रथम अत्रि गौत्र के ऋषियों ने सूर्य ग्रहण के कारण पात बिन्दु राहु को पहचाना होगा।

---

1. चित्राणि साकं दिवि रोचनानि सरीसृपाणि भुवने जवानि।
अ-टविंशं सुतमिच्छमानो अहानि गोभिः सपर्यामि नाकम्।।
सुहवमग्ने कृतिकारोहिणी चास्तु भद्रं मृगशिरा शमार्द्रा।
पुनर्वसु सुनृता चारूपु-यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे।।
पूर्वं पूर्वाफल्गुन्यौ चात्र हस्तचित्रा शिवा स्वाति सुखो मे ऽस्तु।
राधे विशाखे सुहवानुराधा ज्ये-ठा सुनक्षत्रमरि-ट मूलम्।।
अन्नं पूर्वा रासतां आषाढा उर्जं मे उत्तर आ वहन्तु।
अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव श्रवण श्रवि-ठा कुर्वतां सुपुरि-टम्।।
आ मे महच्छतभिषग्वरीयः आ मे द्वया प्रौ-ठपदा सुशर्म।
आ रेवती चाश्वयुजौ भगं मे आ मे रविं भरण्य आ वहन्तु।।
अथर्ववेद संहिता 19:7
2. ऋग्वेद संहिता 1:24:10
3. शतपथ ब्राह्मण 2:1:2:4
4. वृहस्पति प्रथमञ्जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
ऋग्वेद 4:57:4
5. वृहस्पतिः प्रथमञ्जायमानो ति-यं नक्षत्रमभिसंबभूव ।
तैत्तिरीय ब्राह्मण 3/1/1
6. ऋग्वेद 10:12:3
7. भारतीय ज्योतिष शंकर बालकृ:ण दीक्षित पृ. 89
8. भारतीय ज्योतिष शंकर बालकृ:ण दीक्षित पृ. 89

इसीलिये यह कहा गया कि इस स्वर्भानु आसुर ने सूर्य को बींध दिया[1]।

इस प्रकार इस अध्ययन से प्रतीत होता है कि ऋग्वेद काल से लेकर ब्राह्मण उपनिषद काल

तक के लम्बे काल खण्ड में वैदिक ऋषियों को न केवल काल विभाजन, मास गणना, ऋतु, अयन और संवत्सर का ही ज्ञान था अपितु सौर और चान्द्र मास की गणना में पडने वाले अन्तर और उसे समायोजन के लिये मल मास और अधिक मास की परिकल्पना का भी ज्ञान था। वह जानता था कि सूर्य और चन्द्र की गति के कारण मास और ऋतुयें बनती हैं। उसे अमान्त और पूर्णिमान्त दोनों मास

पद्धतियों का ज्ञान था। नक्षत्रों के आधार पर सूर्य और चन्द्र के मार्ग को विभाजित करने की पद्धति का

भी उसे ज्ञान था। इतना ही नहीं इन नक्षत्रों में कार्य करने से क्या शुभाशुभ फल प्राप्त होते हैं इसका चिन्तन भी इस काल में प्रारंभ हो गया था।

ऐसी स्थिति में ज्योतिष के मूल तत्त्वों का प्रारंभ वैदिक काल में हो गया था। आज उस ज्ञान को आगे बढाने की आवश्यकता है न कि भारतीयता को शत्रु मानकर उसे न-ट करने के षड्यन्त्र की। आज भी आकाशीय पिन्ड़ो का अध्ययन करने के लिये अन्तरिक्ष केन्द्र स्थापित किये गये है, उपग्रह छोड़े जाते हैं, शुक्र मंगल के प्रति खोजी यान भेजे जाते हैं यदि ये सब अवैज्ञानिक हैं तो फिर तथाकपित भगवाकरण के विरोधी और पृ:ठ पोषक रा-ट्र क्यों इतना पैसा व्यर्थ कर रहे हैं। यदि ये सब अभियान सत्य हैं तो वैदिक ज्योतिष भी शोध के लिये उतना ही महत्वपूर्ण है।

---

1. यं वै सूर्यः स्वर्भानुस्तमसा विध्यदासुर
अत्रय स्तमन्वविदन्न हन्य 1न्ये अशक्नुवन्।।
ऋग्वेद संहिता 5:40:9